जो मेरे साथ
अच्छा है वो
मेरे लिए अच्छा है।
– अज्ञात

अमीर देशों का वैचारिक मंच

इससे भी बड़ी बात यह कि ऑस्ट्रेलिया, स्विट्जरलैंड और ब्रिटेन के पर्यावरण वैज्ञानिकों की एक टीम द्वारा की गई यह स्टडी वर्ल्ड इकनॉमिक फोरम द्वारा प्रायोजित है, जो खुद दुनिया के सबसे अमीर देशों का वैचारिक मंच है।

नेहा सनवाल।

कोरोना के प्रकोप से जूझ रही दुनिया के लिए सबसे बड़ा खतरा यह वायरस नहीं बल्कि हर किसी के मन में उछाल मार रही अमीरी की ललक है। मजेदार बात यह कि ऐसा वीतरागी निष्कर्ष किसी आध्यात्मिक गुरु या साधु–संत का नहीं बल्कि दुनिया के कुछ जाने–माने वैज्ञानिकों का है। इससे भी बड़ी बात यह कि ऑस्ट्रेलिया, स्विट्जरलैंड और ब्रिटेन के पर्यावरण वैज्ञानिकों की एक टीम द्वारा की गई यह स्टडी वर्ल्ड इकनॉमिक फोरम द्वारा प्रायोजित है, जो खुद दुनिया के सबसे अमीर देशों का वैचारिक मंच है।

पर्यावरण के बिगड़ते हालात पर चिंता पिछले कुछ दशकों में बढ़ती गई है। लगातार यह कहा जाता रहा है कि पृथ्वी को अगर एक जिंदा ग्रह बनाए रखना है तो मानव समाज को अपनी प्राथमिकता बदलनी होगी। लेकिन ये बातें प्रायः नैतिकतावादी आग्रह के ही रूप में आती रहीं। प्राथमिकताएं तय करने का अधिकार जिन लोगों के हाथों में था, उन्होंने कभी 'लिप सर्विस' से आगे बढ़ने की जरूरत नहीं महसूस की। ज्यादातर एक–दूसरे पर दोष मढ़कर ही काम चलाते रहे। बल्कि कई राष्ट्राध्यक्ष इस बीच ऐसे भी हुए जिन्होंने पर्यावरण संबंधी चिंताओं को यूं ही खड़ा किया जा रहा हौआ बताया और इन्हें सिरे से नकार दिया।

बहरहाल, अभी ऐसा लग रहा है कि जो काम प्रदूषित होती हवा, जीव–जंतुओं की विलुप्त होती प्रजातियां और वातावरण में बढ़ती गर्मी नहीं कर सकी, उसे कोरोना वायरस ने एक ही झटके में संपन्न कर डाला। इस संकट ने न केवल आम लोगों को बल्कि जीवन के हर क्षेत्र में निर्णायक स्थानों पर बैठे लोगों को भी उद्वेलित कर दिया। कई तरफ से यह बात सामने आने लगी कि अपने जीवन को अधिक से अधिक सुविधासंपन्न बनाने के क्रम में हमने अन्य जीव जंतुओं के लिए कोई सुकून की जगह ही नहीं छोड़ी है। उनके जीवन में लगातार बढ़ता हमारा दखल खतरनाक वायरसों के उभार का कारण बन रहा है।

जिस वैज्ञानिक रिपोर्ट का हम यहां जिक्र कर रहे हैं, उसमें स्पष्ट कहा गया है कि अगले दस वर्षों में दुनिया के नष्ट होने का सबसे बड़ा खतरा परमाणु युद्ध से नहीं बल्कि लोगों की अधिक से अधिक उपभोग करने की इच्छा से है। लेकिन समस्या यह है कि इसी इच्छा का संगठित रूप वह कंज्यूमरिज्म है, जो पिछले कुछ दशकों के आर्थिक विकास का मुख्य प्रेरक तत्व रहा है।

वर्ल्ड इकॉनमिक फोरम जैसे मंचों ने कंज्यूमरिज्म के ग्लोबल इंजन जैसी भूमिका निभाई है और हर तरह से इसे प्रोत्साहित किया है। लेकिन यही वर्ल्ड इकॉनमिक फोरम आज आर्थिक विकास की गति और दिशा में अपेक्षित बदलाव सुनिश्चित करने वाले ढांचागत सुधार की बात कर रहा है। फोरम के फाउंडर और एक्जीक्युटिव चेयरमैन क्लॉस श्वैब कोरोना महामारी की पृष्ठभूमि में पूंजीवाद को नए सिरे से ढालने की जरूरत बता चुके हैं। उम्मीद करें कि इस बार ये बातें महज बातों तक सिमटकर नहीं रह जाएंगी। इन्हें जमीन पर उतारा जाएगा, ताकि पृथ्वी के सभी जीव–जंतुओं के लिए बेहतर भविष्य सुनिश्चित हो सके।

सही लक्ष्य

धर्म-दर्शन

अशोक वोहरा।

इस दुनिया की प्रत्येक वस्तु ने एक ना एक दिन नष्ट अवश्य होना है। अंततः हमें भी एक दिन इस संसार से जाना ही होगा और हम अपनी समस्त प्रिय वस्तुओं को यहीं पीछे छोड़ जाएंगे। चूँकि हम इंसानों को इस तरह बनाया गया है कि हमारा ध्यान अपनी इच्छाओं की पूर्ति करने में ही लगा रहता है, इसीलिए आवश्यकता है सही प्रकार की इच्छा रखने की। सबसे पहले तो हमें एक लक्ष्य तय कर लेना चाहिए और सही लक्ष्य है प्रभु को पाना, परमात्मा में अपनी आत्मा का मिलाप करवाना। हम अपनी अनमोल साँसों को दुनियावी इच्छाओं की पूर्ति में ही जाया कर देते हैं। अंत में हमें महसूस होता है कि इनसे हमें वो स्थाई खुशियाँ, प्रेम, और संतोष नहीं मिला जो हम असल में पाना चाहते थे।

संपादकीय

विधायक आगे आएं

विधायिका को बचाने के लिए सांसदों और विधायकों को ही सामने आना होगा। इसके लिए दलबदल कानून में बदलाव की जरूरत है। यदि किसी सरकार के पास अपनी पार्टी का बहुमत है तो उसे शक्ति परीक्षण से तब तक न गुजारा जाए जब तक उसकी ही पार्टी के विधायक सदन की सदस्यता से इस्तीफा नहीं दे देते। सदन के अंदर यदि कोई विधायक अपनी पार्टी के खिलाफ बोलता है तो उसे उसकी पार्टी के खिलाफ नहीं माना जाना चाहिए। उसे पार्टी से जोड़े रहना चाहिए क्योंकि वह पार्टी चुनाव चिह्न से चुना गया है। सांसद और विधायक के सदन के बाहर के आचरण को दलबदल कानून की जद से बाहर किया जाना चाहिए। पीठासीन अधिकारी किसी सदस्य के सदन के अंदर के आचरण पर कार्रवाई जरूर करें, लेकिन सदन के बाहर किसी सदस्य का आचरण उनकी चिंता का कारण नहीं होना चाहिए। अभी भी समय है। पीठासीन अधिकारियों को निश्चित नियम बनाकर इस तरह के मामले निष्पक्ष और विश्वसनीय ढंग से खुद ही निपटाने चाहिए। विधानसभा अध्यक्ष को विशेषाधिकार है कि वह दलबदल करने वाले या इसका प्रयास करने वाले विधायकों की सदस्यता रद्द करें। लेकिन यहां सवाल कुछ और भी है। दलबदल कानून की व्याख्या राजनीतिक दल अपने नफे–नुकसान के आधार पर करते हैं। इस मामले में कोई दल किसी से पीछे नहीं है। यदि वे पार्टी पॉलिटिक्स में ही फंसे रहे तो विधायिका और भी कमजोर होती जाएगी और न्यायपालिका के निर्देशों का अंकुश और कड़ा होता जाएगा।

अपने ऐतिहासिक निर्णय में सुप्रीम कोर्ट ने सदन चलाने की प्रक्रिया तय करते हुए विधानसभा अध्यक्ष को बाकायदा निर्देश दिए कि उस दिन विधानसभा की बैठक कैसे संचालित होगी।

विधायिका के अधिकार

बृजेश शुक्ल

वर्ष 1998 की बात है। कल्याण सिंह सरकार से विद्रोह कर जगदंबिका पाल मुख्यमंत्री बन गए थे। मामला इलाहाबाद हाईकोर्ट पहुंचा। 24 घंटे बाद हाई कोर्ट का निर्णय आने वाला था कि सरकार का गठन संवैधानिक तरीके से हुआ है या नहीं। मुख्यमंत्री सचिवालय के अधिकारियों ने पहले से ही व्यवस्था कर रखी थी कि यदि हाई कोर्ट सरकार गठन को अवैध घोषित करता है तो तत्काल एक याचिका सुप्रीम कोर्ट में डाल दी जाए। सारे कागज तैयार थे और उनको ले जाने के लिए एक विमान अमौसी हवाई अड्डे पर खड़ा था। इलाहाबाद हाईकोर्ट ने उस अधिसूचना को अवैध घोषित कर दिया जिसके तहत जगदंबिका पाल को मुख्यमंत्री पद की शपथ दिलाई गई थी। मामला सुप्रीम कोर्ट गया। अपने ऐतिहासिक निर्णय में सुप्रीम कोर्ट ने सदन चलाने की प्रक्रिया तय करते हुए विधानसभा अध्यक्ष को बाकायदा निर्देश दिए कि उस दिन विधानसभा की बैठक कैसे संचालित होगी।

इस प्रकरण से यह सवाल उठा कि क्या न्यायपालिका यह बताने का अधिकार है कि सदन कैसे चलाया जाए। संविधान में विधायिका के अपने अधिकार हैं। संसद, विधानसभाएं और विधान परिषदें अपने बनाए नियमों से चलती हैं।

इसमें किसी बाहरी शक्ति का हस्तक्षेप स्वीकार्य नहीं है। यदि बाहर के बनाए नियमों से सदन नहीं चल सकता तो फिर क्या सुप्रीम कोर्ट ने इस संबंध में हस्तक्षेप कर गलती की? और विधानसभा अध्यक्ष ने कोर्ट का आदेश क्यों मान लिया? यह सवाल बहुत बड़ा है और इसका जवाब भी विधायिका में बैठे लोगों को ही देना होगा। क्या न्यायपालिका ने विधायिका से अधिकार छीना है, या विधायिका ने स्वयं कोर्ट की शरण में जाकर उसे हस्तक्षेप का मौका दिया? ध्यान देने की बात यह भी है कि ऐसे मामले रोज उठते हैं। विधायिका के मामले कोर्ट में जाते ही रहते हैं। उन पर कोर्ट का निर्देश भी आता है और पीठासीन अधिकारी वे निर्देश मानते भी हैं।

राजस्थान में अभी बहुमत और शक्ति परीक्षण को लेकर जैसी खींचतान चल रही है, मामला कोर्ट तक गया और अब राज्यपाल भी अपने स्तर पर सदन से जुड़े मामले निर्देशित करना चाहते हैं, यह सब देखकर लगता है कि विधायिका और कमजोर होती जा रही है। राजस्थान ही क्यों, लगभग सभी विधानसभाओं में शक्ति परीक्षण के विवाद अदालतों में गए और वहीं निपटे भी। विधायिका में निर्णय लेने की जैसे ताकत ही नहीं बची। उसके निर्णय अक्सर एकपक्षीय होते हैं। इसी कारण वे न्यायिक चुनौती का शिकार होते हैं और फिर कानून की कसौटी पर खरे नहीं उतर पाते। हालांकि सदन के अंदर सांसद और विधायक बार बार यह कहते हुए सुने जाते हैं कि सदन अपने बनाए नियमों से चलता है लेकिन वास्तव में अब सदन अपने बनाए नियमों से नहीं चल रहे हैं। सदन संचालन में राजनीति इस कदर हावी हो गई है कि राजर्षि पुरुषोत्तम दास टंडन जैसे पीठासीन अधिकारी का यह कथन बेमानी हो गया है कि यदि एक भी सदस्य उनकी निष्पक्षता पर सवाल उठा देगा तो वह अपने पद से इस्तीफा देकर चले जाएंगे।

राजभवन की भूमिका का सवाल भी कम बड़ा नहीं है। बोम्मई केस में सुप्रीम कोर्ट ने कहा था कि राजभवन विधायकों के सिर गिनने का स्थान नहीं हो सकता। बहुमत का परीक्षण सदन के अंदर ही हो सकता है, बाहर नहीं। पार्टी के चिह्न से चुने गए विधायक सदन के अंदर मनमानी नहीं कर सकते।

अष्टयोग-5126

	2				6	
3	24	6	37	2	32	
						3
5	33	1	29	4	30	
7		5	4			2
	38	4	31	3	29	
4		7			2	

प्रस्तुत खेल सुडोकू व जोड़ की पद्धति का मिश्रण है. खड़ी व आड़ी पंक्तियों में 1से 7 तक के अंक लिखने अनिवार्य हैं. गहरे काले वर्ग में लिखी संख्या चारों और के 8 वर्गों की संख्या का कुल योग होगी. सीधी अथवा आड़ी पंक्तियों में 1 से 7 तक के अंक होना अनिवार्य है.

अष्टयोग 5125 का हल

7	1	3	4	6	5	2
4	38	6	34	2	32	7
6	4	7	1	5	2	3
5	29	1	33	4	36	6
3	1	2	6	7	4	5
1	24	4	35	3	28	1
2	6	5	7	1	3	4

Jagrutidaur.com, Bangalore

अपना ब्लॉग

इसमें कोई दो राय नहीं है

मोहन। सदन के अंदर पार्टी व्हिप का उल्लंघन करने वाले सदस्यों की सदस्यता रद्द होनी चाहिए, इसमें कोई दो राय नहीं है। लेकिन क्या किसी मुद्दे पर सवाल उठाना भी पार्टी के खिलाफ बगावत माना जाना चाहिए? पिछले दिनों उत्तर प्रदेश विधानसभा में एक घटना घटी। पुलिस उत्पीड़न को लेकर बीजेपी के कई विधायक अपनी ही सरकार के खिलाफ सदन में धरने पर बैठ गए। क्या इन विधायकों के विरोध को उनकी विधानसभा सदस्यता समाप्त करने का आधार बनाया जा सकता है? यदि विधायक अपनी पीड़ा सदन में नहीं कहेंगे तो फिर कहां कहेंगे? लेकिन उन्हें यह अधिकार नहीं दिया जा सकता कि वे अपनी पार्टी के व्हिप के खिलाफ वोट दे दें। जो विधायक चुने जाते हैं, सरकार की तरह उनकी भी जवाबदेही जनता के प्रति होती है। उन्हें यह अधिकार होना चाहिए कि वे अपनी आवाज. उठाएं। हर बात में सरकार की हां में हां मिलाना तानाशाही का प्रतीक है। इससे न लोकतंत्र मजबूत हो सकता है और न अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता।